सोलह कारण भावना परिशीलन

मयूर पिच्छिधारी श्रमणाचार्य विमदसागरजी महाराज

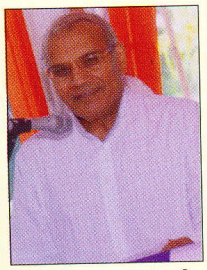

डॉ. शितलचन्द जैन
जयपुर

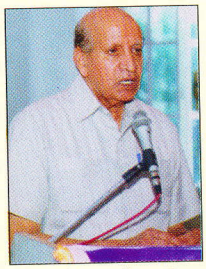

डॉ.देव कोठारी
उदयपुर

डॉ. जयकुमार उपाध्ये
नई दिल्ली

डॉ. प्रेमसुमन जैन

डॉ. ज्योति बाबू
उदयपुर

डॉ. श्रेयांस सिंघई
जयपुर

डॉ. जिनेन्द्रकुमार जैन
उदयपुर

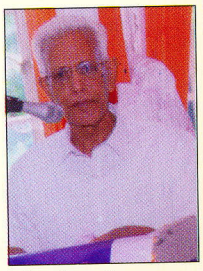

डॉ. पी. सी. रावका
जयपुर

डॉ. सत्यनारायण भारद्वाज

डॉ. सनतकुमार जैन
जयपुर

डॉ. योगेशकुमार जैन
लाडनूं

डॉ. रेखा जैन
उदयपुर

डॉ. सरोज जैन

श्रीमती शोभा धाया

डॉ. बबीता
जयपुर

डॉ. तारा डागा
जयपुर

विषय दर्पण

ज्ञानानुभव स्वर – उपाध्याय अनुभव सागर
दर्शन विशुद्धि भावना अन्वेषण – प्राचार्य डॉ.शीतलचन्द जैन
विनय सम्पन्नता भावना अन्वेषण – डॉ.श्रीमती कल्पना जैन
शीलव्रत अनतिचार भावना अन्वेषण – डॉ.सनतकुमार जैन
अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग भावना अन्वेषण – प्रोफेसर प्रेम सुमन जैन
संवेग भावना का अनुशीलन – डॉ.राजेश जैन
शक्तितस्त्याग भावना अन्वेषण – प्रो.श्रेयांशकुमार सिंघई
शक्तितस्तप भावना अन्वेषण – डॉ.प्रेमचन्द्र रांवका
साधुसमाधि भावना अन्वेषण – व्याख्याता मधु जैन
साधुसमाधि भावना अन्वेषण – डॉ.श्रीमती सरोज जैन
वैयावृत्य भावना अन्वेषण – डॉ.तारा डागा
वैयावृत्य भावना – डॉ.बबीता जैन
अर्हद्भक्ति भावना अन्वेषण – प्रो.जिनेन्द्रकुमार जैन
आचार्य भक्ति भावना अन्वेषण – प्रो.दीनानाथ शर्मा
आचार्य भक्ति भावना अन्वेषण – डॉ.देव कोठारी
बहुश्रुत भक्ति भावना अन्वेषण – डॉ.उदयचन्द्र जैन
बहुश्रुतभक्ति भावना – वीरचन्द्र जैन
बहुश्रुतभक्ति भावना अन्वेषण – पं.सुरेश जैन मारौरा
आवश्यकापरिहाणि भावना अन्वेषण – डॉ.महावीरप्रसाद शास्त्री
मार्ग प्रभावना भावना – डॉ.अनिलकुमार जैन
मार्ग प्रभावना भावना – डॉ.सत्यनारायण भारद्वाज
मार्ग प्रभावना भावना अन्वेषण – डॉ.रेखा जैन
प्रवचन वत्सलत्व भावना – डॉ.योगेशकुमार जैन
प्रवचन वत्सलत्व भावना – डॉ.गजेन्द्रकुमार जैन
विद्वत संगोष्ठी में शंका समाधान
भावना अन्वेषण एक अनुशीलन – सत्र

सोलह कारण भावनाओं में मार्ग प्रभावना का वैशिष्ट्य

– डॉ. सत्यनारायण भारद्वाज,
लाडनूं

भारतीय दर्शनों में मनुष्य जीवन को श्रेष्ठ एवं उपयोगी बनाने के लिए अनेक प्रकार के चिन्तन प्रस्तुत किये गये हैं। इन दर्शनों में जैनधर्म दर्शन अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है, जिसमें मनुष्य के आत्मिक उत्थान पर अत्यधिक बल दिया गया है। अनेक उपायों के द्वारा मनुष्य अपना आत्मिक उत्थान कर सकता है। इन उपायों में व्रत, तप, साधना, पुण्यकर्म, कारण भावनाएँ आदि प्रमुख हैं। मेरा शोधालेख इन्हीं सोलह कारण भावनाओं में से मार्ग प्रभावना भावना पर आधारित है।

भावना –

वीर्यान्तरायक्षयोपशमचारित्रमोहोपशमक्षयोपशमांगोपांगनाम लाभापेक्षेण आत्मानां भाव्यन्त ता इति भावना।

अर्थात् वीर्यान्तराय, क्षयोपशम चारितमोहोपशम-क्षयोपशम और अंगोपांग नाम कर्मोदय की अपेक्षा रखनेवाले आत्मा के द्वारा जो भायी जाती है और जिनका बार-बार अनुशीलन किया जाता है, वे भावना हैं। **ज्ञातेऽर्थे पुनः पुनश्चिन्तनं भावना** जाने हुए अर्थ का पुनःपुनः चिन्तन करना भावना है।

भावना ही पुण्य-पाप, राग-वैराग्य, संसार व मोक्ष आदि का कारण है। अतः जीव को सर्वदा कुत्सित भावनाओं का त्याग कर के उत्तम भावनाएँ भानी चाहिए। सम्यक् प्रकार से भायी गई सोलह उत्तम भावनाएँ व्यक्ति को सर्वोत्कृष्ट तीर्थंकर पद में स्थापित करने में समर्थ है।

प्रभावना –

सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररत्नत्रयप्रभावेन आत्मनः प्रकाशनं प्रभावनम्।

अर्थात् सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र रूप रत्नत्रय के प्रभाव से आत्मा को प्रकाशमान करना प्रभावना है। आचार्य समन्तभद्र के अनुसार तीर्थंकरों ने रत्नत्रय को ही धर्म कहा है – **सम्यग्दृष्टि–ज्ञान–वृत्तानि धर्मं धर्मेश्वरा विदुः।** इसका तात्पर्य यह हुआ कि मनुष्य को रत्नत्रय की भावना भानी चाहिए, जिससे मोक्षमार्ग की प्रभावना स्वतः ही हो जाती है।

आठों कर्मों में तीर्थंकर नाम कर्म सर्वाधिक पुण्यकर्म है। यह पुण्यकर्म करोड़ो मनुष्यों में से कोई एक व्यक्ति ही उपार्जन कर पाता है। जिस मनुष्य को ऐसी उत्कृष्ट भावना हो कि मैं त्रिलोकवर्ती समस्त प्राणियों का उद्धार करुँ उस भावना के साथ जिसके 16 भावनाओं में से दर्शनविशुद्धि भावना के साथ कोई एक, दो, तीन आदि और भी भावना हो उस महान जगत् हितैषी पवित्र व्यक्ति के तीर्थंकर प्रकृति का बंध होता है। तीर्थंकर प्रकृति वाला जीव नरक में भी अन्य नारकी जीवों से अच्छा रहता है। तीर्थंकर के गर्भ, जन्म, तप, केवलज्ञान और मुक्ति के समय देवों के द्वारा महान उत्सव होता है, उस उत्सव को देखकर बहुत से देवों, मनुष्यों, पशु–पक्षियों को सम्यग्दर्शन होता है, आनन्द होता है, इस लोककल्याण के कारण उन उत्सवों को कल्याणक भी कहा जाता है।

भरत, ऐरावत क्षेत्रों में तीर्थंकरों के पाँच कल्याणक होते हैं, परन्तु विदेह क्षेत्र में जो पूर्व भव से तीर्थंकर प्रकृति का बंध कर के आते हैं, उनके 5 कल्याणक होते हैं। जो गृहस्थ अवस्था में उसी भव में तीर्थंकर उपार्जन करते हैं, उनके तप, ज्ञान, निर्वाण ये तीन कल्याणक होते हैं और मुनि अवस्था में जिन के तीर्थंकर प्रकृति का बंध होता है उनके ज्ञान और मोक्ष ये दो कल्याणक ही होते हैं। उस तीर्थंकर प्रकृति के बंध की कारणभूत 16 भावनाएँ

हैं। इस कारण उनका नाम षोडश कारण भावना है।

सोलह कारण भावनाएँ –

अनेक ग्रंथों में सोलह कारण भावनाओं का नामोल्लेख व वर्णन प्राप्त होता है। कहीं कहीं नाम किंचित् भिन्नता भी पायी जाती है –

दंसणविसुज्झदाए विणयसंपण्णदाए सीलव्वदेसु णिरदिचारदाए आवासासु अपरिहीणदाए खण–लवपडिबुज्झणदाए लद्धिसंवेगसंपण्णदाए जधाधामे तधातवे, साहूणं पासुअपरिचागदाए साहूणं समाहिसंधारणाए साहूणं वेज्जावच्चजोगजुत्तदाए अरहंतभत्तीए बहुसुदभत्तीए पवयणभत्तीए पवयणवच्छलदाए पवयणाप्पभावणदाए अभिक्खणं णणोवजोगजुत्तदाए इच्चेदेहि सोलसेहि कारणेहि जीव तित्थयरणामगोदं कम्मं बंधंति।

दर्शन विशुद्धता, विनय सम्पन्नता, शीलव्रतों में निरतिचारता, छह आवश्यकों में अपरिहीनता, क्षणलवप्रतिबोधतता, लब्धि संवेग सम्पन्नता, यथाशक्ति तप, साधुओं को प्रासुक परित्यागता, साधुओं को समाधिसंधारणा, साधुओं की वैयावृत्तयोगयुक्तता, अरहन्तभक्ति, बहुश्रुत भक्ति, प्रवचन भक्ति, प्रवचन वत्सलता, प्रवचनभावना और अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग युक्ताता इन सोलह कारणों से जीव तीर्थंकर नाम गोत्र कर्म को बांधते हैं।

दर्शन विशुद्धि, विनय संपन्नता, शील व व्रतों का अतिचार रहित पालन करना, ज्ञान में सतत् उपयोग, सतत् संवेग, शक्ति के अनुसार त्याग, शक्ति के अनुसार तप, साधु समाधि, वैयावृत्त करना, अरहन्तभक्ति, आचार्य भक्ति, बहुश्रुत भक्ति, प्रवचन भक्ति, आवश्यक क्रियाओं को न छोड़ना, मोक्ष मार्ग की प्रभावना व प्रवचनवात्सल्य ये तीर्थंकर नामकर्म के आस्रव है।

तत्त्वार्थसूत्र में भी षोडशकारण भावनाओं का नामोल्लख इस प्रकार प्राप्त होता है।

दर्शनविशुद्धिर्विनयसम्पन्नताशीलव्रतेष्वनतिचारोऽभीक्ष्णज्ञानोपयो संवेगौ शक्तिस्त्यागतपसी साधुसमाधिवैयावृत्यकरणमर्हदाचार्य-बहुश्रुत प्रवचनभक्तिरावश्यकापरिहाणि-मार्ग प्रभावना प्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थंकरत्वस्य।।

1. दर्शन विशुद्धि 2. विनय संपन्नता 3. शीलव्रतेष्वनतिचार 4. अभीक्ष्णज्ञानोपयोग 5. संवेग 6. शक्तितः त्याग 7. शक्तितः तप 8. साधुसमाधि 9. वैयावृत्तकरण 10. अर्हतभक्ति 11.आचार्य भक्ति 12.बहुश्रुत भक्ति 13. प्रवचन भक्ति 14. आवश्यकापरिहाणि 15. मार्ग प्रभावना 16. प्रवचनवत्सलत्व। ये सभी सोलह कारण भावनाएँ तीर्थंकरत्व नाम की प्रकृति का बन्ध करनेवाली है।

मार्ग प्रभावना भावना का लक्षण –

मार्ग दो हैं – मोक्ष मार्ग व संसार मार्ग। मोक्ष मार्ग में संवर निर्जरा होती है तथा संसार मार्ग में आस्रव व बंध होता है। जैनधर्म का प्रभाव समस्त जनता में प्रचार करने का प्रयास करना मार्ग प्रभावना नामक भावना है। जैसा कि कहा भी गया है –

ज्ञानरविप्रभयार परसमयखद्योततिरस्कारिण्या, सत्तपसा महोपवासादि-लक्षणेन सुरपतिविष्टरप्रकम्पन हेतुना, जिनपूजया वा भव्यजनकमलखण्डप्रबोधनप्रभया, सद्धर्मप्रकाशनं मार्गप्रभावनमिति संभाव्यते।

पर समय रूपी जुगुनुओं के प्रकाश को पराभूत करनेवाले ज्ञानरवि की प्रभा से, इन्द्र के सिंहासन को कंपा देनेवाले विकसित महोपवासादि सम्यक् तपों से तथा भव्यजन रूपी कमलों को विकसित करने के लिए सूर्यप्रभा के समान जिनपूजा के द्वारा सद्धर्म का प्रकाश करना मार्ग प्रभावना है।

इस भावना के अपर नाम सन्मार्ग, मोक्षमार्ग भावना भी प्राप्त होते हैं। मेरे द्वारा यहाँ मार्ग अथवा सन्मार्ग अथवा मोक्षमार्ग की प्रभावना का महत्त्व

प्रतिपादित करना अनिष्ट है। सन्मार्ग जो मोक्ष का सत्यार्थ मार्ग है, उसका प्रभाव प्रकट करना, वह मार्ग प्रभावना है। वह सन्मार्ग रत्नत्रय है, रत्नत्रय आत्मा का स्वभाव है; उसे मिथ्यात्व, राग, द्वेष, काम, क्रोध, मान, माया, लोभ ने अनादि से मलिन तथा विपरीत कर रखा है। अब परमागम की शरण लेकर मुझे मिथ्यात्वादि दोषों को दूर कर के रत्नत्रय स्वभाव को उज्ज्वल करना है। यह भाव मन में धारण करना सन्मार्ग प्रभावना है।

जैसा कि तत्त्वार्थसूत्र में निर्देश है कि – सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्राणि मोक्ष मार्गः इस भावना में मनुष्य चिन्तन करता है कि यह मनुष्य जन्म, इन्द्रियों की पूर्णता, ज्ञानशक्ति, परमागम की शरण, साधर्मियों का समागम, रोग रहित अवस्था, क्लेशरहित जीविका इत्यादि पुण्यरूप सामग्री प्राप्त कर के भी यदि आत्मा को मिथ्यात्व, कषाय, विषयों से नहीं मुक्त करता है तो अनन्तानन्त दुःखों से भरे संसार-समुद्र से मेरा निकलना अनन्तकाल में भी नहीं होगा। जो सामग्री आज मिली है वह अनन्तकाल में भी मिलना अति दुर्लभ है। अंतरंग-बहिरंग सकल सामग्री पाकर भी यदि आत्मा का प्रभाव प्रकट नहीं करुंगा तो काल अचानक आकर समस्त संयोग नष्ट कर देगा। इसीलिए अब मुझे राग-द्वेष दूर कर के जैसे मेरा शुद्ध वीतराग स्वरूप अनुभवगोचर हो, उस प्रकार ध्यान स्वाध्याय में तत्पर होना है।

बाह्य प्रवृत्ति उज्ज्वल कर के अंतरंग धर्म का प्रभाव प्रकट कर के मार्ग प्रभावना ऐसी करना है, जिसे देखकर अनेक जीवों के हृदय में धर्म की महिमा प्रवेश कर जाये। जिनेन्द्र देव के अभिषेक का उत्सव ऐसा करना है, जिसे देखकर हजारों लोगों के भाव जिनेन्द्र के जन्मकल्याण के समय जिस प्रकार इन्द्रादि देवों ने अभिषेक कर के अपना जन्म सफल किया उसी प्रकार जय-जयकार शब्दों द्वारा हमारे स्तवन के उच्चारण से लोग अपने को कृतार्थ मानकर तन-मन से प्रफुल्लित हो जाये। इस प्रकार से अभिषेक द्वारा प्रभावना करना।

मार्ग प्रभावना भावना के प्रमुख तत्त्व या माध्यम –

जिनेन्द्रभक्ति करना – जिनेन्द्र भगवान की भक्ति, विनयपूर्वक, निश्चल ध्यान से ऐसे पूजन करो, जिसे करते हुए देखकर तथा शुद्ध भक्ति के पाठ पढ़ते तथा सुनते हुए हर्ष के अंकुर प्रकट हो जाये, आनन्द हृदय में नहीं समाये, जिन्हें देखकर मिथ्यादृष्टियों के भी ऐसे ही परिणाम हो जाये जिसमें ये निर्दोष उत्तम उज्ज्वल प्रामाणिक सामग्री, ये उज्ज्वल सोने-चाँदी-पीतल के मनोहर पूजन के पात्र, ये भक्तिरस से भरे अर्थ सहित कानों को अमृतरस से सींचते हुए शुद्ध अक्षरों का उच्चारण, एकाग्रता से विनय सहित शब्दों के कहे अनुसार उज्ज्वल द्रव्यों को चढ़ाना, ये परमशांतमुद्रारूप वीतराग के प्रतिबिम्ब प्रातिहार्यों सहित पूजना, स्तवन करना, नमस्कार करना आदि समाहित है।

भक्ति ही संसार समुद्र में डूबते हुए लोगों को हस्तावलम्बन देनेवाली है। हमारे लिए भव-भव में जिनेन्द्र की भक्ति ही शरण हो। इस प्रकार जिनेन्द्र का नित्य पूजन करना, अष्टान्हिका, षोडशकारण, दशलक्षण व रत्नत्रय पर्वों में सभी पाप के आरम्भ छोड़कर जिन पूजन करना, आनन्द सहित नृत्य करना, कर्णप्रिय वाद्य बजाना, तथा स्वर ताल मूर्च्छनादि सहित जिनेन्द्र के गुणगान करना ये सभी सन्मार्ग प्रभावना है। जिनके हृदय में सत्यार्थ धर्म निवास करता है। उन में यह प्रभावना होती ही है।

शास्त्र प्रवचन की प्रेरणा देना या व्याख्यान करना – जिनेन्द्र प्ररुपित चारों अनुयोगों के सिद्धान्तों का ऐसा व्याख्यान करना, जिसे सुनने से एकान्त का हठ नष्ट हो जाये, हृदय में अनेकान्त रस बस जाये, पापों से कांपने लगे, व्यसन छूट जाये, दया रूप धर्म में प्रवर्तन हो जाये, अभक्ष्यभक्षण का त्याग हो जाये। ऐसा व्याख्यान करना, जिसे सुनने से हजारों मनुष्यों का कुदेव, कुगुरु, कुधर्म के आराधन का त्याग हो जाये तथा वीतरागदेव, दयारूप धर्म, आरम्भ परिग्रह रहित गुरु के आराधन में दृ श्रद्धान हो जाये। ऐसा व्याख्यान करना जिसे सुनकर अनेक मनुष्य रात्रि भोजन, अयोग्य भोजन, अन्याय के

विषय, परधन में राग छोड़कर व्रतों में, शील में, संयम भाव में, संतोषभाव में लीन हो जाये। ऐसा उपदेश करना जिससे देहादि परद्रव्यों से भिन्न अपनी आत्मा का अनुभव हो जाये, शरीर में एकत्वबुद्धि छूट जाये, जीव-अजीवादि द्रव्यों का प्रमाण-नय-निक्षपों के द्वारा निर्णय होकर संशय रहित द्रव्य, गुण, पर्यायों का सत्यार्थ स्वरूप प्रकट हो जाये, मिथ्यात्व दूर हो जाये – ऐसे आगम के व्याख्यान से सन्मार्ग की प्रभावना होती है।

तपश्चरण – ऐसा घोर तपश्चरण करना, जो असाधारण हो, ऐसे तप द्वारा प्रभावना होती है। विषयानुराग छोड़कर निर्वाछक होने से भी आत्मा का प्रभाव प्रकट होता है, तथा धर्म का मार्ग भी तप से ही चमकता है। यह तप दुर्गति के मार्ग को नष्ट करनेवाला है। तप बिना कामादि विषय ज्ञान-चारित्र को नष्ट कर देते हैं। तप के प्रभाव से काम का नाश होता है, रसना इन्द्रिय की चपलता नष्ट हो जाती है, लालसा का अभाव होता है। रत्नत्रय की प्रभावना में तप से ही दृढ़ता होती है।

जिन मंदिर और जिनबिम्ब की प्रतिष्ठा कराना – जिनेन्द्र के प्रतिबिम्ब की प्रतिष्ठा कराना, जिनेन्द्र का मंदिर बनवाना – इनसे सन्मार्ग की प्रभावना होती है। प्रतिष्ठा कराने से जब तक जिनबिम्ब रहेगा तब तक दर्शन, स्तवन पूजनादि कर के अनेक भव्यजीव पूण्य उपार्जन करेंगे, तथा जो जिनमंदिर बनवायेंगे उन गृहस्थों का ही धन प्राप्त करना सफल होगा। पूजन, रात्रि जागरण, शास्त्रों का व्याख्यान, श्रवण, पठन, जिनेन्द्र का स्तवन, सामायिक, प्रतिक्रमण, अनशनादि तप, नृत्य-गान-भजन, उत्सव जिनमंदिर होने पर ही होते हैं। जिनमंदिर बिना धर्म समस्त समागम होता है ही नहीं है। इसीलिए अधिक क्या लिखें, अपने तथा पर के उपकार का मूल जिनमंदिर बनवाना है।

धन में आसक्ति घटाने की प्रेरणा – धर्म का उत्कृष्ट मार्ग तो समस्त परिग्रह छोड़कर वीतरागता अंगीकार करना है, परन्तु जिसके प्रत्याख्यान व अप्रत्याख्यान कषायों का उपशम नहीं हुआ है, उससे गृह सम्पदा नहीं छोड़ी

जाती है।

धन सम्पदा अधिक हो तो प्रथम तो जिनका आपने अन्याय से धन लिया हो उनके पास जाकर क्षमा मांगकर, उनका धन लौटा देना चाहिए। यदि आपके पास धन बहुत हो तो धन के उपार्जन करने का त्याग करना। तीव्रराग के बढ़ानेवाले इन्द्रियों के विषयों की लालसा छोड़कर संवररूप होना। फिर जो शेष धन रहे उसमें से अपने मित्र, हितचिन्तक, पुत्री, बहन, बुआ, बंधुओं में जो निर्धन, रोगी, दुःखी हो, उनकी तथा अनाथ विधवा हो उनको यथायोग्य देकर संतोषित करना चाहिए। अपने आश्रित, सेवकादि व जो समीप में रहनेवाले हो उनको यथायोग्य संतुष्ट कर के, फिर पुत्र को स्त्री को उनका हिस्सा अलग दे देना चाहिए उसके पश्चात् जो धन बचे उसे जिनमंदिर बनवाने में, जिनबिम्ब की प्रतिष्ठा कराने में तथा जिनेन्द्र के धर्म का आधार जिनसिद्धान्तों को लिखवाने में छपवाने में कृपणता छोड़कर उदार मन से पर के उपकार करने की बुद्धि से धन लगाना चाहिए उसके समान कोई प्रभावना नहीं है।

बाह्य आचरण में शुद्धता बढ़ाने की प्रेरणा – जो मन्दिर प्रतिष्ठा तो कराये किन्तु अनीति से पराया धन रख ले, अन्याय का धन ग्रहण कर ले तो उसकी समस्त प्रभावना नष्ट हो जायेगी। प्रतिष्ठा करनेवाला, मन्दिर बनवाने वाला यदि अनीति वणिज व्यवहार करता है, हिंसादि महापापों में अयोग्य निंद्य वचनों में, तीव्र लोभ में रत है, कुशील में रत है, तथा अतिकृपणता कर के परिणामों में संक्लेश रूप होकर धन खर्च करता है तो उसकी समस्त प्रभावना नष्ट हो जायेगी। इसीलिए जिनबिम्ब की प्रतिष्ठा करानेवाले की, जिनमंदिर बनवानेवाले की बाह्य प्रवृत्ति भी शुद्ध होनी चाहिए, उससे सन्मार्ग की प्रभावना होती है। मंदिर में शिखर, कलश, घण्टा-घण्टी, कपड़े का चन्दोवा, सिंहासन आदि उत्तम उपकरण देकर तथा स्वाध्याय में प्रवृत्ति आदि द्वारा होनेवाली प्रभावना दुःख का नाश करनेवाली होती है।

शुद्ध आचरण की प्रभावना – अतः समस्त धन चले जाने पर भी व प्राण चले जाने पर भी जो अपने निमित्त से धर्म की निन्दा-हास्य कभी नहीं करता, उसके सन्मार्ग प्रभावना होती है। इस प्रभावना की महिमा का करोड़ जिह्वाओं द्वारा भी वर्णन करने में कोई समर्थ नहीं है। इसीलिए हे भव्यजनों! तीनलोक में पूज्य प्रभावना इसको दृढ़ता से धारण कर के इसी की भक्ति से पूजा करों, इसी का अर्घ उतारण करो। जो प्रभावना अंग को दृढ़ता से धारण करती है, वह इन्द्रादि देवों द्वारा पूज्य तीर्थंकर होता है।

सारांश यह है कि 'सर्व-जगत् का कल्याण करने वाला जैनधर्म संसार में सब जगह फैले इसके लिए जो भी अच्छे उपाय हों उनको उपयोग में लेना चाहिए। तीर्थंकर प्रकृति का बंध की कारणभूत यह मार्ग-प्रभावना भावना है।

आत्म प्रभावशाली दृढ़ निष्ठा, निर्मलज्ञान तथा पवित्र आचरण के द्वारा बनाकर करता है, जो मनुष्य अटल श्रद्धालु,ज्ञानवान, सदाचारी होते हैं उनके मुख पर आत्मतेज झलकता है, उनकी वाणी में महान् बल होता है, उनका एक-एक शब्द अन्य व्यक्तियों के हृदय पर अंकित हो जाता है। उनका हृदय अनुपम शक्ति का केन्द्र बन जाता है, अतः ऐसे व्यक्तियों को संसार में कोई अन्य व्यक्ति महान् बनाने के लिए नहीं आया करते, वे स्वयं संसार में महान् बन जाया करते हैं। उस दशा में वे धार्मिक प्रभावना का केन्द्र हो जाते हैं। प्रभावना सदा उनके चारों ओर घूमती रहती है।

इसी बात को लक्ष्य में रखकर श्री अमृतचन्द्र सूरि ने पुरुषार्थ सिद्धयुपाय ग्रंथ में 'प्रभावना' के विषय में लिखा है –

आत्माप्रभावनीयोरत्नत्रयतेजसासततमेघ।
दानतपोजिनपूजाविद्यातिशयैश्चजिनधर्मः।।

अर्थात् निर्मल रत्नत्रय द्वारा आत्मा का सदा प्रभाव बढ़ना चाहिए और दीन-दुःखी जनता का दुःख करने के लिए महान आवश्यक दान देकर, यथेष्ट

प्रभावशाली तपश्चरण कर के, उत्कृष्ट भक्तिभाव से स्वर, ताल, भाव भंगिना के साथ जिनेन्द्र देव का पूजन कर के तथा शास्त्रार्थ, व्याख्यान आदि द्वारा अपने प्रखर ज्ञान से एवं मंत्रों के चमत्कार दिखलाकर इस जगत् में जैनधर्म की प्रभावना प्रकट करनी चाहिए। अत: प्रभावना का मूल आधार सबसे प्रथम अपनी आत्मा है।

अर्हन्त भगवान शरीर तथा उनकी वाणी इसी कारण प्रभावशाली होती है कि उनकी आत्मा सर्वोच्च सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र का भंडार होती है। उनके दर्शन करते ही बिना किसी प्रेरणा के मनुष्यों के हृदय निर्मल हो जाते हैं, मस्तक उन के चरणों में झुक जाता है और पापकर्मों से घृणा हो जाती है। तथा उनका उपदेश सुनकर असंख्य प्राणी आत्म श्रद्धालु बनकर उच्च-आचार आचरण कर के मुक्ति प्राप्त कर लेते हैं। एवं उन अर्हन्त भगवान की प्रतिमा के दर्शन पूजन, चिन्तवन से भी असंख्य नर-नारी आत्म-बोध प्राप्त करते हैं। इस तरह अर्हन्त देव संसार में सबसे अधिक प्रभावना करते हैं। उनसे कम उनके पद-चिन्हों पर चलनेवाले अनेक अतिशय ध्यानि महाव्रती साधु अपने सदाचार तथा प्रचार द्वारा धार्मिक प्रभावना करते हैं।

उनसे भी कम प्रभावना गृहस्थ श्रावकों के द्वारा होती है क्योंकि उनकी श्रद्धा, ज्ञान आचरण महाव्रती साधुओं की अपेक्षा थोड़ा होता है तथा गृहस्थाश्रम के कार्यों में रत रहने के कारण उनको उतना समय भी नहीं मिलता। फिर भी जैन गृहस्थ को अपना खान-पान, लेन-देन, रहन-सहन, व्यवहार बहुत शुद्ध रखना चाहिए। जिससे दूसरे मनुष्य उसको देखकर प्रभावित हो।

●●●

★ व्यवहार नय से जीव पुण्य-पाप का कर्ता है, निश्चय नय से नहीं।
★ सच्चे धर्मात्माओं के द्वारा ही सच्ची धर्म की प्रभावना होती है।
★ रागी पाणी ग्रहण करता है और विरागी पाणिपात्र ग्रहण करता है।